Chapter 7

अध्याय-७

' रघुवंश दीपक ' का कला सौष्ठव

अध्याय-७

' रघुवंश दीपक ' में कला सौष्ठव '

' रघुवंश दीपक ' में कला सौष्ठव पर विचार करने से पूर्व कवि सहजराम जी के काव्य विषायक दृष्टिकोण तथा उनके द्वारा स्वीकार किये गये काव्यादर्शों को लक्ष्य करना आवश्यक प्रतीत होता है। पूर्ववर्ती पृष्ठों में हम इस तथ्य की ओर लक्ष्य कर चुके हैं कि 'रघुवंश दीपक ' काल की दृष्टि से यद्यपि रीतिकालीन रचना ठहरती है किन्तु विषाय वस्तु तथा काव्य चेतना की दृष्टि से उसे हिन्दी की भक्तिकालीन रचनाओं से सम्बद्ध करना अधिक समीचीन होगा। इसयुग के कवियों की मूल चेतना भक्ति भाव से प्रेरित आत्माभिव्यक्ति,परमाराध्य केसमक्ष आत्मनिवेदन तथा अपने अपने इष्टदेवों का लीलागान करके आत्म - परितोष के साथ साथ लोक कल्याण परक थी। केवल कवि कर्म निर्वाह या आश्रयदाता की प्रशंसा के लिये काव्य रचना को वे निरर्थक समझते थे। कबीर, सूर, तुलसी आदि की रचनायें उपर्युक्त दृष्टिकोण से ही प्रेरित थीं, किन्तु उनकी इस प्रकार गम्भीर आध्यात्मिक और नैतिक उद्देश्यता के होते हुये भी अनेक भक्त कवियों की रचनायें कवि की उत्कृष्ट काव्य कला को भी प्रमाणित करती हैं। सहजराम कृत 'रघुवंश दीपक ' की रचना की पृष्ठभूमि में यही सोद्देश्यता वर्तमान है। अत: आलोच्य कृति के कला सौष्ठव के सम्यक् अनुशीलन के लिये सर्वप्रथम उसमें प्रस्तुत कवि के काव्यगत दृष्टिकोण पर विचार कर लेना आवश्यक है ।

:काव्य विषायक दृष्टिकोण :

प्रस्तुत प्रबन्ध के तृतीय अध्याय के अन्तर्गत हमने 'रघुवंश दीपक ' की रचना के उद्देश्य पर विस्तार से विचार किया है जिसमें राम का चरित्रगान तथा उसका प्रचार, उन्हें सर्वोपरि आराध्य देव के रूप में स्वीकार कर उनकी भक्ति को चरम साध्य के रूप में प्रतिष्ठित करना, आत्म कल्याण के लिये प्रायश्चित स्वरूप ग्रन्थ रचना तथा उसके माध्यम से लोकहित साधन,धार्मिक

जगत की विषमता में समन्वित राम-भक्ति की प्रतिष्ठा तथा युगीन चेतना की अभिव्यक्ति एवं युग सन्दर्भ में राम के महच्चरित्र का महत्व उद्घाटन मुख्य रूप से विवेचित किये गये हैं। उपर्युक्त तथ्यों के प्रकाश में कविसहजराम जी के काव्य - विषायक दृष्टिकोण को स्पष्ट रूप से लक्ष्य किया जा सकता है और हम यह कह सकते हैं कि उन्होंने काव्य रचना को मात्र वाणी-विलास नहीं माना था अपितु लोक-हित साधना में सहायक मानकर एक सर्वांगपूर्ण आदर्श की प्रतिष्ठा के लिये प्रयास किया था। भारतीयसंस्कृति के सर्वोच्च आदर्श तथा भारतीय धर्म साधना के अप्रतिम महच्चरित्र को उन्होंने अपने काव्य का विषय बनाकर विश्व मानव के कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया था। वस्तुत: उनका काव्य विषायक दृष्टिकोण इसके अतिरिक्त कुछ न था। सहजराम जी ने काव्य रचना के संबंध में अपने जो विचार स्फुट रूप में प्रस्तुत किये हैं वे इस प्रकार हैं -

१- उनके अनुसार रामचरित से शून्य उच्चकोटि का काव्य भी वायस तीर्थ के समान ही निरर्थक है। वाणी की सार्थकता रामचरित गान में ही है। १

२- प्राकृत जन का गुण गान मृग जल की भांति असत् तथा दुखदायी है जबकि श्रीराम का चरित्र गान सुरसरि के जल के समान पावन तथा सम्पूर्ण दुख दोषों का हरण करने वाला है। अस्तु जीवन को आनन्दमय बनाने तथा संसार की विषयाग्नि से बचने के लिये श्रीराम का चरित्र गान ही उनकी दृष्टि में काव्य का विषय हो सकता था । २

३- उपर्युक्त काव्य दृष्टि के साथ साथ `रघुवंश दीपक` के कवि की यह भी कामना थी कि वह अपने काव्य ग्रन्थ को एक उत्तम प्रबन्ध के रूप में प्रस्तुत कर संसार में सत्कवि के रूप में यश अर्जन कर सके। इस संबंध में `रघुवंश दीपक` की निम्नांकित पंक्तियां देखी जा सकती हैं जिनमें कवि का आत्म-कथन इसप्रकार है -

सुनि है सुजन सुग्रन्थ सराही। कहिहि खल गण दूषण जाही।।
मोहि न दुख दूषी तिन केरे । जो न विदूषहिं विदुष घनेरे ।।

१- देखिये - रघुवंश दीपक बालकाण्ड दोहा -४
` रामचरित बिनु भणित भलि,वायस तीरथ जानि।
बसहिं न हरिजन हंस तजि, यश मानस सुख खानि।।

२- देखिये - वही दोहा ३ व ४ के मध्य की चौपाइयां -
(अ) यदपि असत प्राकृत कविताई। कहै सुनहिं विषाहक मन लाई ।।
प्राकृत यश रविकर भव वारी। सकहिं बुझाइ न दुसह दवारी।।

सत्कवि सुयश मनोरथ मोरी। हंसिहैं लोग जानि मति मोरी।।
यथा परिश्रम करि फल पावै। तिमि जिमि बावन बांह उठावै।।१

उपर्युक्त आत्म कथन में जहां एक ओर कवि का अपने कृतित्व के प्रति आत्म विश्वास प्रकट होता है वहां उसकी मनो कामना पर भी प्रकाश पड़ता है। सत्कवि के रूप में यश: प्राप्ति की मनोकामना तथा तदर्थ उसकी यत्नशीलता को विशुद्ध काव्य रचना के उद्देश्य का परिचायक कहा जा सकता है। अन्यत्र भी वे उत्तम उक्ति को सज्जनों के हृदयों को तरंगित करने में समर्थ मानते हैं और इसी में उसकी सार्थकता भी समझते हैं। २

उपर्युक्त विवेचन से प्रकट है कि कवि सहजराम जी काव्याभिव्यक्ति को राम भक्ति के सम्यक् सन्निवेश के साथ प्रस्तुत करने के लिये कृत संकल्प थे। ऐसी सोद्देश्यता के कारण सहज काव्याभिव्यक्ति का प्रभावित होना सम्भव है और साथ ही उसका एक निश्चित दिशा में उन्मुख तथा सीमित होना भी अवश्यम्भावी है।

सहजराम जी के उपरिनिर्दिष्ट काव्य विषयक दृष्टिकोण की तुलना यदि ` रामचरित मानस ` में अभिव्यक्त गोस्वामी तुलसीदास के तद्विषयक दृष्टिकोण से करें तो दोनों में बहुत कुछ साम्य दिखाई देता है। उदाहरणस्वरूप

हरियश सुधा स्वाद जिन पावा। नर कवित्त विष तिनहिं न भावा।।
राम सुयश सुरसरिजल पावन। हरै दुरित दुख दोष नसावन।।

(ब) वही बालकाण्ड दोहा-५

हरै पाप परिताप करि सगम सुरसरि पाथ।
होइहिं पावन भणित यह, राम कथा के साथ।।

१- देखिये - ` रघुवंश दीपक ` बालकाण्ड दोहा १ व २ तथा १० व ११ के मध्य की चौपाइयां।

२- देखिये - वही बालकाण्ड दोहा २ से पूर्व की चौपाई -
राका शशि सदोक्ति अनूपा। सुजन सिन्धु मोदन खल कूपा।।

तुलसीदास जी की निम्नलिखित उक्तियाँ यहाँ उल्लेखनीय हैं -

१- भणित विचित्र सुकवि कृत जोऊ।रामनाम बिनु सोह न सोऊ।।

२- कीरति भणित भूमि भल सोई।सुरसरि सम सब कहं हित होई।।

३- जोप्रबन्ध नहिं बुध आदरहीं। सो श्रम बादि बालकवि करहीं।।[१]

प्रस्तुत प्रबन्ध के पूर्ववर्ती पृष्ठों में हम यह लक्ष्य कर चुके हैं कि कवि सन्तराम जी के प्रेरणा स्त्रोत महाकवि गोस्वामी तुलसीदास जी थे, उन्हीं की रचना 'रामचरित मानस' को उन्होंने अपने सम्मुख आदर्श के रूप में रखकर 'रघुवंश दीपक' की रचना की थी। अस्तु काव्य विषयक दृष्टिकोण में, दोनो ही महाकवियों में जो साम्य दिखाई देता है वह स्वाभाविक तथा आवश्यक प्रतीत होता है ।

: रघुवंश दीपक का अभिव्यक्ति पक्ष :

'सामान्यत: अभिव्यक्ति,सत्ता के वाह्य प्रकाशन की व्यापकतम संज्ञा है। काव्य सृजन की प्रक्रिया में कवि का अनुभूत सत्य जिन उपकरणों की सहायता से अथवा जिस माध्यम व ढंग से वाह्य जगत में सामान्य अनुभव की वस्तु बनता है उसे अभिव्यक्ति केनाम से जाना जाता है। अभिव्यक्ति के मुख्य चार उपकरण हैं (१) भाषा (२) अलंकार (३) छन्द (४) शैली । 'रघुवंश दीपक' के अभिव्यक्ति पक्ष पर हम इन्हीं उपकरणों के आधार पर विचार करेंगे ।

१- रघुवंश दीपक की भाषा

भावाभिव्यक्ति का मुख्य साधन होने के कारण भाषा काव्य का अनिवार्य एवं अविभाज्य अंग है। कवि का अनुभूत सत्य भाषा के माध्यम से ही मुखरित होता है। डा० भगीरथ मिश्र ने ठीक ही कहा है कि 'भाषा कविता का शरीर है। बिना भाषा के भाव निराकार हैं औरउनका व्यापक प्रभाव नहीं है।[३] अर्थात् कविता का प्राण यदि भाव है तो भाषा उसकी

१- रामचरित मानस - बालकाण्ड

२- डा० रामेश्वर लाल खण्डेलवाल-जयशंकर प्रसाद वस्तु और कला - पृष्ठ ३६५ प्रथम संस्करण ।

३- डा० भगीरथ मिश्र - हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास - सं० २००५ संस्करण पृष्ठ ३६३ ।

धारण करने वाला शरीर है। कवि का अनुभूत सत्य गूंगे के गुड़ की भांति तब तक दूसरों का आस्वाद्य नहीं बन सकता जब तक उसे वाणी नहीं मिलती। भाषा इस वाणी को व्यापकता प्रदान कर स्व-संवेद्य वस्तु को पर-संवेद्य बना देती है। इस प्रकार जीवन्त काव्य के लिये भाषा की सजीवता तथा उसका सामर्थ्य आवश्यक होती है क्योंकि 'भाषा का निर्माण करने वाले विविध अवयव अपने आप में निर्जीव पिण्ड हैं, वे परस्पर मिलकर ही सप्राण होते हैं।१ 'रघुवंश दीपक' की भाषा के स्वरूप को लक्ष्य करते समय हमें उपर्युक्त आधार पर उसकी सामर्थ्य, सजीवता एवम् प्रयोगगत सफलता असफलता को देखना आवश्यक प्रतीत होता है।

: शब्द - भण्डार :

'रघुवंश दीपक' की रचना अवधी में हुई है जिसकी एक सशक्त काव्य भाषा के रूप में प्रतिष्ठा इससे पूर्व 'रामचरितमानस' में गोस्वामी तुलसीदास जी कर चुके थे। जिसमें उन्होंने संस्कृत के अनेकानेक शब्द ग्रहण कर उसे संस्कृतस्थ बना दिया था। साथ ही अन्य भाषाओं के शब्दों को भी अवधी की प्रकृति के अनुरूप ढाल कर या कभी कभी ज्यों का त्यों स्वीकार कर उसे अति व्यापक बना दिया था। कवि सहजराम जी ने गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा संकलित उक्त व्यापक शब्द सम्पदा से युक्त अवधी के इसी स्वरूप को अपनी अभिव्यक्ति का माध्यम बनाया था। अस्तु उनके शब्द भण्डार में जहां एक ओर विदेशी भाषाओं के प्रचलित शब्द मिलते हैं वहां दूसरी ओर संस्कृत तथा अन्य भारतीय भाषाओं के शब्द भी पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। विदेशी भाषाओं में से अरबी और फारसी के प्रचलित शब्द 'रघुवंश दीपक' में मिलते हैं जो संक्षेप में इसप्रकार हैं -

---

१- डा० रामेश्वर लाल खण्डेलवाल - जयशंकर प्रसाद वस्तु और कला - प्रथम संस्करण - पृष्ठ ३५६।

(अ) अरबी शब्द

अरबी भाषा के ग़रीब, बाग़, जहाज़, विदा, ढोल , लायक़, खबरि , फ़ौज़ , बज़ाज, जिन्स, सराफ़, हद, ग़ुलाम, हराम, ज़ाहिर , उमिर, अबीर , सूरति, कसाई, आदि शब्द रघुवंश दीपक में मिलते हैं।

(ब) फ़ारसी शब्द

जहान, साज़, करतूति, शोर, शोरबी, कागद, बाज़ार, कोतल, लगाम, सरताज, सहनाई, दरबार, रुख़ , बेचारा, मजूरी , तरकस,ताजी , बन्दीखाना, बाज़ीगर , तख्त-नख्त, ज़हर -चैन, ख़ज़ाना, सख्म, क़ौम , निशानी, मालूम आदि ।

उपर्युक्त शब्दों के विषय में यह उल्लेखनीय है कि ये शब्द भारतीय भाषाओं में और विशेषतः हिन्दी की विविध बोलियों में पूर्णतया घुलमिल से गये हैं। मध्य कालीन हिन्दी काव्य में इन सभी के प्रयोग सर्व प्रचलित रहे हैं। इनकी दूसरी विशेषता यह है कि इन्हें अपनी काव्य भाषा के अनुरूप ढालकर प्रयोग किया गया है। दूसरे शब्दों में कहा जाये तो प्रवृत्ति के कारण इनके तद्भव रूप प्रायः प्रयुक्त हुये दिखाई देते हैं। जिन्स, क़ौम,फ़ौज़ , बज़ाज, उमिरि, सूरति, करतूति, कागद, सहनाई, ख़ज़ाना, ज़हर, मालुम, कोतल जैसे शब्द प्रयोग इसी कोटि के हैं। यही कारण है कि विदेशी शब्दों के प्रयोग के कारण उनके अर्थ ग्रहण में कहीं कठिनाई नहीं होती और प्रायः भाषा में अस्वाभाविकता भी नहीं आने पाई । इतना ही नहीं अपितु कवि ने साहित्यिक अवधी में ढलकर भाषा प्रवाह में घुलमिल से गये हैं । प्रमाणस्वरूप निम्नलिखित उदाहरण पर्याप्त होगा -

बेचत बसन बजाज़ विचारे । मूलैं पट निज पाट उतारे ।।
गली बजार छतीसौ कौमा । निरखत मुख चकोर जिमि सोमा।।
जात चले मग राज किशोरा। छाण छाण छबि छलकत चहुँ ओरा।।१

१- रघुवंश दीपक - बालकाण्ड - दोहा २५०

उपर्युक्त विदेशी शब्दों की भांति प्रादेशिक शब्दों के स्वाभाविक प्रयोग भी कवि की भाषा में प्राप्त होते हैं। राजस्थानी, बुन्देलखण्डी तथा भोजपुरी के सर्व प्रचलित शब्दों को सब्जराम जी ने उनके प्रचलित अर्थों में स्वीकार कर लिया था। राजस्थानी का ` मनु हारि ` (मनाना) ` लारा ` (लगाया) इन्हीं अर्थों में रघुवंश दीपक में प्रयुक्त हुये हैं। बुन्देलखण्डी में `पनवार` ` सैरा` गेहुवा तथा भोजपुरी के ` रौरे, राउर शब्द भी अपने मूल अर्थों को ही अभिव्यक्त करते हैं।

कवि सब्जराम जी के भाषा प्रयोग की तीसरी विशेषता संस्कृत की तत्सम शब्दावली के अवधी में सफल प्रयोग की है। उनकी भाषा में अनेक स्थलों पर संस्कृत शब्दो तथा उक्तियों के जो सफल प्रयोग मिलते हैं वे उनके संस्कृत के अच्छे ज्ञान के परिचायक हैं। संस्कृत की तत्सम पदावली का प्रयोग उन्होंने प्राय: स्तुतियों में किया है जो गोस्वामी तुलसीदास जी की एतद्विषयक प्रवृत्ति का परिचायक है। स्तुतियों में संस्कृत की तत्सम पदावली के प्रयोग के कारण उनका अर्थ गौरव बढ़ गया है साथ ही भाषा में प्रवाह की वृद्धि हुई है। इस संबंध में निम्नांकित छन्द का उल्लेख अप्रासंगिक न होगा -

छन्द - नमामिंदिरा नाथ पाथोज नामं। क्षितीशं रमाशील नीलाम्बुदायं ।।
दशग्रीव वंशाटवी धूम केतुं । महाघोर संसार पाथोधि सेतुं ।।
पदाम्भोज अंभोज संभूत सेवी। शिला श्राप हारी करी दिव्य देवी।।
नमो देव देवेश देवाग्र गंता । दया सिन्धु देवारि दर्पाय हंता।। १

सूक्ष्माति सूक्ष्म अनुभूतियों को प्रकट करने की सामर्थ्य अवधी में पर्याप्त मात्रा में मिलती है। कवि ने इसके लिये जन साधारण द्वारा प्रयुक्त ठेठ अवधी शब्दों का प्रयोग निःसकोच होकर किया है। यहां ऐसे प्रयोगों के एकाध ` उदाहरण ` पर्याप्त होंगे। अप्रत्याशित आघात से पहुंचने वाली हार्दिक वेदना को व्यक्त करने के लिये कवि ने ` करकि उठेउ उर ` जैसा देशज शब्द

१- रघुवंश दीपक - उत्तरकाण्ड दोहा ३० व ३१ के मध्य का छन्द ।

उस समय प्रयुक्त किया है, जब विश्वामित्र के द्वारा राम-लक्ष्मण की याचना पर दशरथ का हृदय प्रेम विह्वल हो वेदना से भर उठता है-

सुनि मुनि मर्म वचन अवधेशा ।। १

करकि उठेउ उर कठिन कलेशा।।

कहना न होगा कि इस प्रसंग पर ' करकि उठेउ उर' का प्रयोग कवि कोसटीक भावाभिव्यंजना शक्ति का द्योतक है। इसी प्रकार दशरथ के राज वैभव को देखकर इन्द्र का भी हतप्रभ होना तथा उसी प्रकार के वैभव प्राप्ति की लालसा करना 'सिहाय ' शब्द द्वारा अभिव्यक्त हुआ है -

प्रजा प्रसन्न पुन्य सब देशा ।

विभव बिलोकि सिहाय सुरेशा।।२

इसके अतिरिक्त ' उकसि उकसि, कलकन लगे, कनकटा,मुस,उरके, पति आहिं, उचकि उचकि, कमाई, गोड़िन, धाम ,नेवारि,आदि अनेक ग्राम्य शब्दों का प्रयोग कवि ने भाव-प्रकाश की अनुरूपता के लिये निस्संकोच रूप से किया है। 'रघुवंश दीपक ' में प्रयुक्त होने वाले शब्द भण्डार को लक्ष्य कर लेने के पश्चात् हम उसमें प्रयुक्त होने वाली भाषा की विशेषताओं को देखने का प्रयास करेंगे ।

इसमें विशेष कर यह विचारणीय है कि कवि भावों या घटना प्रसंगों के अनुरूप भाषा प्रयोग में कहां तक सफल हुआ है।किसी भी कवि की भाषा की मुख्य विशेषता यही होती है कि उसमें प्रसंगोचित भावानुरूपता के साथ पात्रों के सूक्ष्मातिसूक्ष्म भावों की अभिव्यक्ति की भी सामर्थ्य हो तथा वह तदनुकूल रस व्यंजना भी करसके। क्योंकि "शब्द सस्थापना की कला में जो कवि जितना ही निष्णात् होगा उतनी ही उसकी भाषा की समग्र चेतना भी मर्म स्पर्शिनी होगी।" ३ ' रघुवंश दीपक ' में भाषा की भावानुरूपता तथा पात्रानुरूपता को इसी दृष्टि से देखना आवश्यक प्रतीत होता है।

१- रघुवंश दीपक बालकाण्ड दोहा १७६ केबाद की चौपाई

२- वही- बालकाण्ड दोहा १०५ से पूर्व की चौपाई

३- डॉ. राजकुमार पाण्डेय - 'रामचरितमानस का काव्यशास्त्रीय अनुशीलन' प्रथम निर्माण' पृष्ठ. 338

१- रघुवंश दीपक की भाषा की भावानुरूपता

भाषा पर कवि का अधिकार तभी सिद्ध होता है जब उसके द्वारा [illegible] अभिप्रेत अर्थ, प्रयोग की गई भाषा के माध्यम से यथावत् घोतित हो। ' रघुवंश दीपक ' की रुचिर वाक्य रचना में ऐसी पदावली का प्रयोग हुआ है जिसमें विभिन्न भावों को अभिव्यक्त करने की पूर्ण क्षमता है। कोमल तथा सुकुमार भावों की अभिव्यंजना में कोमल पदावली तथा प्रसाद एवम् माधुर्य गुण युक्त भाषा एवम् युद्धादि दृश्यों के चित्रण में कठोर शब्द रचना ऐसे प्रसंगों में स्पष्टत: देखे जा सकते हैं। विस्तार भय से इन सभी प्रसंगों का उल्लेख यहां सम्भव नहीं प्रतीत होता अस्तु उसे पाठकों के लिये छोड़कर हम केवल इतना ही कहना चाहेंगे कि हमारे आलोच्य कवि को भाषा की प्रकृति का पूर्ण ज्ञान था। श्रृंगार के स्थायी भाव रति को परिपुष्ट करने वाली उनकी माधुर्य गुण युक्त नाद सौष्ठव से पूर्ण भाषा को निम्नांकित चौपाइयों में देखा जा सकता है -

कटि किंकिनि पग नूपुर चारु । मनहुं निशान बजावत मारु ।।
संग सखी सब सुभग सयानी । गावत गीत मधुर मृदु बानी ।।
भूषण बसन विभूषित बामा ।मानहुं मदन सैन अभिरामा।।१

\- - - - - - - - - - - - - -

मरकत कनक वरण वर बीरा। कटि तूणीर पाणि धनु तीरा।।
चारु चरण पकंज नख शोभा । बरणि न जाइ देखि मन लोभा।।
सोहत अरुण श्याम दृग कोये ।बन्धुक सुवन सेज अलि सोये ।।
शोभा सदन रदन मृदु हांसा। भृकुटी कुटिल मनोहर नासा ।।
तिलक ललाट पटल गोरोचन । सुखमा सदन मदन मद मोचन ।।२

इसी प्रकार शोक, क्रोध, भय, रौद्र हास्यादि भावों को व्यक्त करने में भी भावानुरूप भाषा का प्रयोग, ' रघुवंश दीपक' में मिलता है जो

१- रघुवंश दीपक - बालकाण्ड दोहा २३५ तथा २३६ के मध्य की चौपाइयां ।
२- रघुवंश दीपक - बालकाण्ड दोहा २४० तथा २४१ के मध्य की चौपाइयां ।

विभिन्न प्रसंगों में स्पष्ट देखा जा सकता है। इन भावों को व्यक्त करने के लिये कवि ने ध्वन्यात्मक शब्द विधान तथा अनुप्रास की योजना में बड़ी कुशलता का परिचय दिया है ।

२- पात्रानुरूप भाषा

महाकाव्य में कवि पात्रों के माध्यम से ही अपने व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति करता है। साथ ही वह समकालीन युग सन्दर्भ को भी पात्रों के ही माध्यम से व्याख्यायित करता है। किसी पात्र विशेष के मनोगत सूक्ष्म भावों की अभिव्यंजना , उसके जातिगत संस्कार, उसके विभिन्न कार्य कलापों तथा शीलोद्घाटन एवम् व्यक्तित्व के प्रकाशन के लिये कवि को भाषा की सम्पूर्ण समाहार शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है। ` रघुवंश दीपक ` में कवि सहजरामजी ने इस ओर विशेष कौशल प्रदर्शित किया है। `रघुवंश दीपक` में राम- भरत, लक्ष्मण, सीता, हनुमान तथा रावण ऐसे विशिष्ट पात्र हैं जिनके चरित्रों को कवि ने अपनी भावना तथा कल्पना के अनुपम संयोग से सँवारा है। राम के शील, विवेक, गाम्भीर्य , नीति मत्ता, उदारतादि उदात्त गुणों के अनुरूप तथा इसी प्रकार भरत के उदात्त चरित्र एवम् सुशीलता तथा भ्रातृ प्रेम की व्यंजना, लक्ष्मण के क्रोध जनित अमर्ष तथा अनन्य भावना से राम की सेवा करने की प्रवृत्ति की अभिव्यक्ति, सीता के आदर्श भारतीय नारी जीवन के उदात्त रूप की कल्पना, हनुमान की अनन्य दास्य भावना तथा राम के लिये सर्वतो भावेन ` अपने जीवन को समर्पित करने की भावना को व्यंजित करने में कवि ने इन पात्रों की चारित्रिक गरिमा के अनुकूल ही भाषा का प्रयोग किया है। प्रति नायक रावण के अहंकार, दम्भ तथा बर्बरता पूर्ण स्वभाव की अभिव्यक्ति के लिये भी कवि ने तदनुकूल भाषा का प्रयोग किया है। रावण एक निरंकुश शासक था इसलिये उसके चरित्र में स्वच्छन्दता एवम् निर्ममता भी थी। उसकी कूटनीतिज्ञता का परिचय भी कवि ने अंगद के साथ होने वाली बातों के माध्यम से सम्वादों में प्रस्तुत किया है । पात्रों के पद, वर्ग, मन: स्थिति के अनुरूप भाषा का प्रयोग इस प्रसंग में स्पष्ट देखा जा सकता है ।

' रे रावण मैं रघुपति दूता। साधु शिरोमणि शूर सपूता।।
में भाषा के माध्यम से बालि पुत्र अंगद ने अपना परिचय जिस ओजस्विता तथा निर्भयता से दिया है वह उसके पद के अनुरूप ही था। एक तो वह बालिका पुत्र, युवराज था दूसरी और और श्रीराम के राजदूत के रूप में वह संधि प्रस्ताव लेकर गये थे अत: इस प्रसंग में प्रयुक्त भाषा सचमुच ही पात्रानुकूल भाषा कही जायेगी। प्रश्नोत्तर शैली में यह सारा प्रसंग व्यंग्यार्थ से भरा हुआ अत्यन्त उत्तेजक है। भाषा में ओज स्पष्ट ही दिखाई देता है। १

' रघुवंश दीपक ' की भाषा-गत उपर्युक्त विवेचन के पश्चात् हम इस निष्कर्ष परपहुंचते हैं कि कवि ने गोस्वामी तुलसीदास जी की ही भांति अवधी को साहित्यिक भाषा के रूप में प्रयोग किया है जिसमें सूक्ष्माति सूक्ष्म भावों को अभिव्यक्त करने की पूर्ण क्षमता है। देशी, विदेशी, ग्राम्य तथा देशज शब्दों को काव्योचित प्रवाह एवं परिष्कृत अभिरुचि के साथ ग्रहण कर कवि सहजराम जी ने उसे व्यापकता प्रदान की है। भाव व्यंजक- रसगुणानुकूल भाषा का सफल प्रयोग हमें 'रघुवंश दीपक ' में मिलता है जिससे कवि ने अपने अनुभूत सत्य को सच्ची तथा पूर्ण अभिव्यक्ति प्रदान करने में सफलता प्राप्त की है। वह एक कुशल शब्द शिल्पी था जो शब्दों की प्रकृति से पूर्ण परिचित था। गोस्वामी तुलसीदास जी के पश्चात् अवधी में भाषा प्रयोग की दृष्टि से सहजराम जी का ही नाम लिया जा सकता है।

' रघुवंश दीपक में अलंकार विधान '

पूर्ववर्ती पृष्ठों में सहजराम जी के काव्य विषयक दृष्टिकोण को लक्ष्य करते समय हम यह कह चुके हैं कि वे शास्त्रकार न होकर मूलत: कवि थे और एक निश्चित उद्देश्य से प्रेरित होकर कवि-यश के आंकाक्षी भी थे। अत: उनके काव्य में भावों की अभिव्यक्ति प्रयास जनित न होकर स्वाभाविक रूप से होना अपेक्षित ही कहा जायेगा। किन्तु जैसा कि निर्दिष्ट किया जा चुका है

१- दृष्टव्य- रघुवंश दीपक लंका-काण्ड दोहा २२ व २४ के मध्य का सम्पूर्ण प्रसंग ।

कि काव्याभिव्यक्ति कीसजगता उनमें होने के कारण अभिव्यंजना शिल्प के अन्य उपकरणों की और उनका ध्यान जाना स्वाभाविक ही था। 'रघुवंश दीपक' की रचना रीति काल में हुई किन्तु वे रीति काल की काव्य चेतना से एक प्रकार से अलिप्त थे। काव्य के अतिरंजित स्वरूप की साधना तथा चमत्कार प्रदर्शन मात्र उनका उद्देश्य नहीं था अपितु अयत्न साध्य स्वाभाविक सौन्दर्य को ही वे काव्य रचना में आवश्यक मानते थे। भाषा के पश्चात् अभिव्यंजना शिल्प के सशक्त साधन के रूपमें अलंकार विधान को माना जाता है, अत: उसकी दृष्टि से प्रस्तुत कृति का अनुशीलन आवश्यक है।

अलंकार का अर्थ है अलंकृति अर्थात् जो विभूषित करता हो उसे अलंकार कहते हैं[1]। आचार्य दण्डी ने काव्य को सुशोभित करने वाले धर्म को अलंकार कहा है। [2] दण्डी द्वारा दी गई परिभाषा में धर्म को पुन: व्याख्यायित करते हुये परवर्ती आचार्यों ने गुणों को काव्य का स्थायी धर्म और अलंकारों को उसका अस्थायी धर्म कहा है। [3] इन आचार्यों ने अस्थायी धर्म कह कर काव्य में अलंकारों की अनिवार्यता को नहीं स्वीकार किया।

आचार्य मम्मट ने 'तद्दोषौ शब्दार्थौ सगुणावनलंकृती पुन: क्वापि' कह कर उपर्युक्त अस्थायी धर्म के रूप में अलंकारों को गौणता प्रदान कर दी। इस प्रकार संस्कृत के उपर्युक्त आचार्यों ने अलंकार को काव्य का आवश्यक अंग मानकर उन्हें काव्य के सौन्दर्य वर्द्धक अंग माने हैं। हिन्दी के लक्षण ग्रन्थकारों ने भी एतद्विषयक अवधारणाओं में अपने पूर्ववर्ती संस्कृत के भिन्न भिन्न आचार्यों का ही अनुधावन किया है फलत: अलंकारों की महत्ता के संबंध में उनमें पर्याप्त मतभेद दिखलाई पड़ता है। आचार्य केशव ने भामह, दण्डी का अनुसरण करते हुये अलंकार को कविता का सर्वस्व माना है। उन्होंने स्पष्ट घोषणा की थी कि 'भूषन बिन न विराजई कविता, बनिता मित्त'[4]। किन्तु मम्मट तथा विश्वनाथ

१- काव्यालंकार सूत्रवृत्ति १।१।२

२- आचार्य दण्डी - काव्यादर्श २।१
'काव्य शोभाकरान धर्मान अलंकारान प्रचक्षते।'

३- काव्य प्रकाश - ८।६६-६७ तथा साहित्य दर्पण ८।१।-१०।१

४- आचार्य केशवदास - रामचन्द्रिका।

का अनुसरण करने वाले आचार्य श्रीपति ने कविता में अलंकार को गौण ही माना है। १ अलंकार संबंधी उपर्युक्त मान्यताओं के आलोक में हम हिन्दी के सुप्रसिद्ध आलोचक आचार्य रामचन्द्र शुक्ल के इस कथन को अधिक महत्वपूर्ण मानते हैं कि 'पहले से सुन्दर अर्थ की शोभा बढ़ाने में जो अलंकार प्रयुक्त नहीं वे काव्यालंकार नहीं ।' वे ऐसे ही हैं, जैसे शरीर पर से उतार कर किसी अलग कोने में रखा हुआ गहनों का ढेर । किसी भाव या मार्मिक भावना से असम्पृक्त अलंकार चमत्कार या तमाशे हैं। २

वस्तुत: अलंकार आभूषण के रूप में ही स्वीकार किये जाने चाहिए जिससे काव्य में सौन्दर्य की वृद्धि हो। जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं हमारे आलोच्य कवि ने अपने महाकाव्य 'रघुवंश दीपक' में अलंकारों की योजना काव्य में सौन्दर्य वृद्धि के लिये तथा उसमें रसात्मकता की सृष्टि के लिये ही की है। उनकी अलंकार योजना का उद्देश्य अपने कथन को सुन्दर ढंग से अभिव्यक्त करना तथा भावों में सौन्दर्य वृद्धि करना था। वस्तु वर्णन में रमणीयता उत्पन्न कर अनुभूतियों और क्रियाओं को मूर्त करना तथा उन्हें सहज बोध गम्य बनाना जिससे वे भार न होकर सौन्दर्य के साधन बन सके, उनकी अलंकार योजना का मुख्य लक्ष्य था, जिसे यहां संक्षेप में प्रस्तुत किया जा रहा है ।

क- रघुवंश दीपक में शब्दालंकार :

यद्यपि सहजराम जी ने शाब्दिक-चमत्कार तथा उसके गोरख धन्धे को महत्व नहीं दिया किन्तु काव्य में रमणीयता तथा भावोत्कर्ष के लिये उन्होंने अनुप्रास, यमक, श्लेषादि अलंकारोंका प्रयोग अवश्य किया है जिन्हें यहां क्रमश: प्रस्तुत किया जा रहा है ।

१- आचार्य श्रीपति - ' जदपि दोष बिन गुन सहित, अलंकार सो हीन ।
कविता बनिता छवि नहीं रस तिन तदपि प्रवीन।।
(डा० भगीरथ मिश्र के हिन्दी काव्य शास्त्र का इतिहास - पृष्ठ ११७ से उद्धृत) ।

२- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल - चिन्तामणि भाग- १ पृष्ठ २४७-२५१ ।

(१) अनुप्रास - गुरुगन लाज विलोकत अवनी। कर जय माल नाग गति गवनी।।
मंद मंद महि पर पगु धरहीं। नूपुर मंजु मधुर रव करहीं ।। १

प्रथम अर्द्धाली में `ग ` की आवृत्ति ने तथा द्वितीय अर्द्धाली में ` म ` और ` प` की आवृत्ति ने सम्पूर्ण कथन में चित्रोपमता तथा रमणीयता उत्पन्न कर दी है। एक दूसरे उदाहरण में भी यही चित्र दिखाई देता है -

` मंगल गति मनोहर बानी।गावत आवत सखी सयानी ।।
भूषण वसन देह द्युति बाढ़ी।दीप शिखा सम दीपति ठाढ़ी।।२

यहाँ भी प्रथम में `वत` तथा द्वितीय मे ` दीप ` शब्द की आवृत्ति ने कथन में रमणीयता की सृष्टि की है। निम्नांकित दोहे में अनुप्रास की सहायता से भावोत्कर्ष किस प्रकार किया गया है - यह दृष्टव्य है -

छोरि छोरि हथियार कोउ,जोरि जोरि युग हाथ ।
परशु पाणि के पग परे, पाहि पाहि भृगुनाथ ।। ३

इसी प्रकार निम्नांकित छन्द में आनुप्रासिक योजना के साथ ध्वन्यात्मकता केकारण प्रसंग गत वातावरण के निर्माण में कवि अत्यन्त सफल हुआ है -

छन्द : जन जन प्रति कंचन के थारे, गन गन कनक कटोरे जू ।
व्यंजन विपुल परोसन लागे, चतुर सुआरन थोरे जू ।।
खोवा, खांड़ ,चिरौंजी खाजा, पापर पूर्ण सुहारी जू ।
फमकि फमकि फुकि परसत चहुं दिशि,फुकि फांका नारी जू ।।

प्रस्तुत छन्द में `कनक कटोरे ` फमकि फमुकि फुकि परसत` तथा फुकि फुकि फांकत नारी में अनुप्रासिकता प्रसंगानुरूप वातावरण को जिस ध्वन्यात्मकता के साथ प्रस्तुत किया है वह कवि के समर्थकवित्व को प्रमाणित करता है ।

१- रघुवंश दीपक - बालकाण्ड
२- वही -
३- वही - दोहा ३३०।१

यमक अलंकार - रघुवंश दीपक में यमक अलंकार का प्रयोग अवश्य ही चमत्कार प्रदर्शन के लिये हुआ है किन्तु ऐसे प्रयोगों की सख्या अत्यल्प ही है। कतिपय उदाहरण यहां उल्लेखनीय हैं -

कमला सन कमलासन माखि । निकट जाहु कर कान न राखि ।।

यहां कमलासन में यमक है जो केवल चमत्कार के लिये प्रयुक्त हुआ है। निम्नांकित पंक्तियों से यह बात और स्पष्ट हो जाती है -

ये अशरण तुम अशरण शरणा। ये बनिता तुम पति दुख हरणा।।

यहां अशरण में यमक का चमत्कारिक प्रयोग मात्र ही दृष्टिगोचर होता है। अत: यह कहा जा सकता है कि प्रस्तुत कृति में यमक के प्रयोग भावोत्कर्ष में सहायक नहीं सिद्ध होते ।

श्लेष अलंकार - श्लेष के प्रयोग `रघुवंश दीपक` में एकाध स्थान पर ही मिलते हैं । उदाहरणार्थ निम्नांकित अर्द्धाली में इस प्रयोग को देखा जा सकता है-

मदन अनंग कुसुम धनुवाना। शिव विपदा अवलावल बाना ।।

यहां अनंग शब्द में श्लेष है। एक तो उसका अर्थ कामदेव के लिये ग्रहण किया जा सकता है तथा दूसरा अर्थ अंग विहीनता के लिये है ।

ख- रघुवंश दीपक में अर्थालंकार

काव्य में अर्थालंकारों का प्रयोग कथन के चमत्कार के साथ भावोत्कर्ष के सशक्त साधन के रूप में किया जाता है। प्रबन्ध काव्यों में इन द्विविधि प्रयोगों के लिये पर्याप्त अवकाश रहता है किन्तु `रघुवंश दीपक` में इनका प्रयोग चमत्कार प्रदर्शन अथवा बौद्धिक व्यायाम का परिणाम नहीं प्रतीत होता अपितु भावोत्कर्ष तथा रसात्मकता की वृद्धि के लिये प्रसंगानुसार उनकी योजना की गई है। कवि सल्जराम जी ने `रघुवंश दीपक` में मुख्यरूप से उपमा, उत्प्रेक्षा, रूपक, दृष्टांत , अतिशयोक्ति अर्थालंकारों का प्रयोग किया है। यद्यपि यह नहीं कहा जा सकता कि अन्य अलंकार उनकी कृति में नहीं पाये जाते फिर भी मात्रा की दृष्टि से जिन अलंकारों का प्रयोग सम्पूर्ण रचना में प्रधान रूप से हुआ है , उन्हीं के एक- दो उदाहरण यहां प्रस्तुत करना ही पर्याप्त होगा ।

१- उपमालंकार

उपमा के चार प्रमुख अंग माने गये हैं। १-उपमेय २- उपमान ३- साधारण धर्म ४- वाचक धर्म । जहाँ इन चारों अंगो की पूर्ण उपलब्धि होती है, पूर्णोपमा कहा जाता है किन्तु इनमें से एक भी जब लुप्त हो जाता है तो लुप्तोपमा कहते हैं। ` रघुवंश दीपक ` में उपमा के ये दोनो रूप मिलते हैं। निम्नांकित उदाहरण में पूर्णोपमा दृष्टव्य हैं-

रमा वाम दिशि सोहत कैसे। नव घन घटा छटा छवि जैसे ।।१

इसी प्रकार अन्य उदाहरण में इसे इस प्रकार देखा जा सकता है -

देखत राम समेत सनेहा। दीप शिखा सम दीपति देहा ।।२

इन दोनो उदाहरणों में उपमा के चारों अंग प्राप्त होते हैं जिनमें भावोत्कर्ष तथा अर्थ गत और शब्दगत दोनो ही चमत्कार उल्लेखनीय है। वस्तुत: इन अर्द्धालियों में पूर्णोपमा का सफल प्रयोग दर्शनीय है। लुप्तोपमा का प्रयोग निम्नांकित अर्द्धाली में देखा जा सकता है -

गोपद सम नाघेउ वारीशा । कीन्ह दशानन कानन खीशा।।३

लुप्तोपमा के एक अन्य उदाहरण से रघुवंश दीपक में उपमा अलंकार के प्रयोग सम्बन्धी कवि की कुशलता को देखा जा सकता है। कुम्भकरण अपने बल का परिचय देते हुये रावण से कहता है -

दोहा - कहि न जाये मनु जाद पति, जिम करणी निज बैन ।
चनक समान चबाइहौं, भालु वली कपि सैन ।। ४

उपर्युक्त दोहे में भालु तथा कपिसेना उपमेय है,चनक उपमान तथा समान वाचक शब्द है, किन्तु साधारण धर्म लुप्त है अत: इसे लुप्तोपमा ही कहा जायेगा।

२- उत्प्रेक्षा अलंकार

रघुवंश दीपक में उत्प्रेक्षा का प्रयोग पुष्कल मात्रा में किया गया है। रूप वर्णन में अथवा अंगों की शोभा के वर्णन में कवि ने इस अलंकार

१- रघुवंश दीपक - बालकाण्ड दोहा ३८।४
२- वही - बालकाण्ड - दोहा २३६।७
३- रघुवंश दीपक - लंकाकाण्ड दोहा ८।६
४- वही - लंकाकाण्ड दोहा १०३

की योजना स्थान-स्थान पर की है जिससे पाठक को सहज में ही सौन्दर्यानुभूति होजाती है। वस्तु, हेतु तथा फल की संभावना के आधार पर आचार्यों ने इसे वस्तूत्प्रेक्षा , हेतूत्प्रेक्षा तथा फलोत्प्रेक्षा के नाम से अभिहित किया है। १ इनमें से प्रत्येक का एक एक उदाहरण पर्याप्त होगा -

वस्तुत्प्रेक्षा - एक वस्तु में दूसरी वस्तु की अर्थात् उपमेय में उपमान की संभावना वस्तूत्प्रेक्षा है। राम-सीता के विवाह प्रसंग में मीठा- जटित मण्डप में स्थित सीता के जावक रंजित पद-नखों का रूप चित्रण कवि द्वारा उत्प्रेक्षा के प्रयोग से निम्नांकित दोहे में अत्यन्त मनोहर एवं प्रभावशाली बन पड़ा है-

दोहा - सीता पद नख अरुणिमा, मीठा मण्डप रहिछाय ।

खेलत मनसिज फागु जनु, अरुण अबीर उड़ाइ ।।२

उपर्युक्त उदाहरण में कवि ने मणि जटित मण्डप में सीता के पद नखों की अरुणिमा की उत्प्रेक्षा फागु खेलने वाले कामदेव द्वारा उड़ाई गई अरुण अबीर से की है। वस्तुत: कवि ने निस्सन्देह ऐसी उक्तियों कीयोजना कर उत्कृष्ट कला सौष्ठव का परिचय दिया है ।

हेतूत्प्रेक्षा - अहेतु में हेतु मानकर उत्प्रेक्षा करना हेतूत्प्रेक्षा है। इसमें अकारण में कारण रूप बताकर सम्भावना की जाती है । जनक वाटिका में सीता अपनी सखियों सहित विभिन्न आभूषणों को धारण किये हुये घूम रही हैं। उनके आभूषणों से उत्पन्न होने वाली ध्वनि तथा साथ में चलने वाली सखियों के समूह में कवि ने निम्नांकित उत्प्रेक्षा की है -

भूषन वसन विभूषित वामा। मानहुं मदन सैन अभिरामा ।

कटि किंकिनी पग नूपुरु चारु। मनहुं निशान वजावत मारु।।३

भूषण ,वसन से विभूषित सभी सखियां मानो कामदेव की सेना हैं तथा किंकिणी और नूपुर की ध्वनि मानो उस सेना में बजने वाला युद्ध का बाजा है। यहां अहेतु में हेतु की कल्पना कितनी सटीक दिखाई देती है ।

फलोत्प्रेक्षा - अफल में फल की सम्भावना करना फलोत्प्रेक्षा कहलाती है। ' रघुवंश दीपक ' के कवि ने निम्नांकित पंक्तियों में किस प्रकार भावोत्कर्ष के लिये

१- दृष्टव्य - भिखारीदास कृत काव्य निर्णय सं० १९५३ संस्करण दोहा ८२-
वस्तु निरखि कै हेतु लखि, कै आगम फल काज ।
कवि कै वक्ता कहत हैं, लगी और से आज ।।

२- रघुवंश दीपक -बालकाण्ड दोहा ३०२ ३- वही- दोहा २३५।४,५

इस अलंकार का प्रयोग सफलता पूर्वक किया है । यह दृष्टव्य है-

कूजत कादम्ब फलित हंसा। फिर हुराम जनु करत प्रशंसा।।
गुंजत मधुकर कमल कलापा। मन्द मन्द जनु करत विलापा।
कहुं कहुं विटप लत, झुकि आईं ।करत बिनय जनु पद शिरनाईं।।१

यहाँ फल कीसम्भावना करते हुये कवि ने वनवास को जाते हुये श्रीराम को रोकने के लिये हंसों के कलरव, मधुपों, के गुंजन में इस बात की उत्प्रेक्षा की है कि मानों वे राम को अयोध्या लौटने की प्रार्थना कर रहे हैं। इसी प्रकार मार्ग में झुकी हुई लतायें उसने इसफल की सम्भावना की है कि मानो वह श्रीराम के चरणों पर शिर झुकाकर उन्हें अयोध्या लौट जाने कीप्रार्थना कर रही है ।

गम्योत्प्रेक्षा - उत्प्रेक्षा में जब वाचक शब्दों के बिना ही अलंकार योजना की जाती है तो उसे काव्य शास्त्रियों ने गम्योत्प्रेक्षा का नाम दिया है। यही प्रतीय माना उत्प्रेक्षा, गूढ़ोत्प्रेक्षा तथा गुप्तोत्प्रेक्षा केनामों से भी जानी जाती है। सन्जराम जी ने 'रघुवंश दीपक' के अन्तर्गत सौन्दर्य वर्णनों में इसका प्रयोग किया है। निम्नांकित उदाहरण मेंउसका सफल प्रयोग देखा जा सकता है -

सोहत अरुण श्याम दृग कोये । बन्धुक सुमन सेज अलि सोये ।।२

नेत्रों की अरुणिमा में श्याम रंग वाली आंखों की पुतली इसप्रकारसुशोभित हो रही है मानो बन्धूक सुमनों कीसेज पर अलि सो रहा हो।यहाँ किसी वाचक शब्द का प्रयोग नहीं हुआ किन्तु उत्प्रेक्षा केद्वारा सौन्दर्य का उद्घाटन हुआ है। उपर्युक्त उदाहरणों के आधार पर हम यह कह सकतेहैं कि कवि ने उत्प्रेक्षा अलंकार की सफल योजना से अप्रस्तुत मेंप्रस्तुत का बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव से विधान कर सूक्ष्मातिसूक्ष्म सौन्दर्यानुभूति के प्रकाशन का सफल प्रयास किया है।

१- रघुवंश दीपक - बालकाण्ड -दोहा १०४।७,८,६
२- रघुवंश दीपक - बालकाण्ड - दोहा २४१। २

३- रूपक अलंकार

' रघुवंश दीपक ' में रूपक अलंकार के निरंग रूपक, परम्परित रूपक तथा सांग रूपक , ये तीनों ही के सफल प्रयोग मिलते हैं । रूपक अलंकार की योजना द्वारा कवि ने सौन्दर्य बोध के साथ ही गम्भीर विषयों को सरस तथा बोध गम्य बना दिया है। इनकी दूसरी विशेषता यह है कि इनके द्वारा सादृश्य एवं साधर्म्य का पूर्ण निर्वाह करते हुये कवि ने अपनी कवित्व शक्ति को पूर्णतया प्रमाणित कर दिया है। रूपक के उपर्युक्त तीनों भेदों में से यहां हम उनमें से प्रत्येक का एक एक उदाहरण प्रस्तुत कर कवि के एतद्विषयक कौशल को दृष्टिगत कराने का प्रयास करेंगे ।

(क) निरंग रूपक - जिस अलंकार योजना में उपमेय और उपमान का अभेद होते हुये भी उन अंगों के सबंध में कुछ न कहा जाये, वहां इस अलंकार की योजना होती है। १ ' रघुवंश दीपक में इसका निम्नलिखित उदाहरण उल्लेखनीय है -

रामचरित वर सूत नवीनो। करि बहु यतन सुयश पट बीनो।।
विमल विवेक वारि वर धोई। दिग्ग पतिन पहिरावहु सोई ।।२

यहां कवि ने रामचरित का नवीन सूत के साथ तथा विमल विवेक का वारि के साथ सादृश्य और साधर्म्य का निर्वाह किया गया है - साथ ही राम कथा की विशेषता की ओर ध्यान आकर्षित कर उसके महत्व का सम्यक उद्घाटन किया गया है ।

(ख) परम्परित रूपक- जहां एक रूपक के द्वारा दूसरे रूपक कीपुष्टि होती है वहां परम्परित रूपक की नियोजना सम्भव होती है। ३ रघुवंश दीपक में एक उदाहरण इस प्रकार है -

---

१- डा०राजकुमारपाण्डेय - रामचरित मानस का काव्य शास्त्रीय अध्ययन प्रथम संस्करण पृष्ठ ३८६ शीर्षक निरंग रूपक ।

२- रघुवंश दीपक - बालकाण्ड दोहा १७।४,५

३- डा० राजकुमार पाण्डेय,रामचरित मानस का काव्य शास्त्रीय अध्ययन प्रथम संस्करण पृष्ठ ३८७ शीर्षक परम्परित रूपक ।

जय मुनि मन मानस मरालिका। महा मोह तम किरनि कालिका।।१

उपरोक्त अर्द्धाली में पार्वती के व्यक्तित्व पर ही प्रथम तथा द्वितीय पदों में एक रूपक के द्वारा दूसरे की पुष्टि की गई है।

(ग) सांग रूपक - सांग का अर्थ है सावयव । जहां प्रस्तुत में अप्रस्तुत का निषेध रहित सावयव आरोप हो, वहां सांग रूपक होता है। २ जिस शब्द योजना में उपमेय एवं उपमान के विविध अंगों का उनके परस्पर आरोपण का विधान किया जाता है वहां सांग रूपक होता है। ३ रघुवंश दीपक में इस रूपक का प्रयोग विशेष रूप से कवि ने 'रघुवंशप्रदीप ' के वर्णन में तथा भव अटवी एवं संत समाज का पर्याप्त रूप में वर्णन करते समय किया है। इसके अतिरिक्त स्थान स्थान पर राम के सौन्दर्य वर्णन में तथा अन्य प्रसंगों में सांग रूप को की योजना मिलती है। 'रघुवंशप्रदीप ' के वर्णन में कवि ने जिस सांग रूपक की उद्भावना की उसका ही उल्लेख यहां पर्याप्त होगा। अन्य उदाहरणों को सुधी पाठकों के लिये छोड़कर निम्नांकित पंक्तियों में सांग रूपक इस प्रकार देखा जा सकता है-

वन्दौ शारद सुरभि समाना। नन्दनि रघुपति भक्ति प्रधाना।।

दुहिउ कमल भव सुमति सुनोई । निगमागम पय पावन सोई ।।

जावन युक्ति जमाव विधाता । मथि घृत रामायण विख्याता।।

बरेउ सो रघुवंश प्रदीपा । ज्वलित शलभ अघ जरत समीपा।।४

~~ज्वलित-सलभ-अघ-जरत-समीपा-~~

अन्य अर्थालंकारों की तुलना में रूपकों के सफल एवं मनोहारी प्रयोग में कवि की निपुणता की अधिक अपेक्षा रहा करती है। उपर्युक्त उदाहरणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि रघुवंश दीपक की रूपक योजना मानस जैसी ही समर्थ काव्य शक्ति की द्योतिका है।

१- रघुवंश दीपक - बालकाण्ड दोहा २४२।६

२- परस्पर सापेक्ष निष्पत्तिकानां रूपाणां संघात् सावयवम् ।
पंडितराज जगन्नाथ कृत - रस गंगाधर ।

३- अंगिनो यदि सांगस्य रूपणं सांगमेव तत् ।
पंडित विश्वनाथ कृत - साहित्य दर्पण १०।३०

४- रघुवंश दीपक - बालकाण्ड दोहा ७।२-५

४- दृष्टांत अलंकार

जहां उपमेय एवं उपमान वाक्य में तथा उन दोनों के साधारण धर्मों में बिम्ब प्रतिबिम्ब भाव की प्रतिष्ठा की जाती है, वहां दृष्टान्त अलंकार की उद्भावना होती है। १ रघुवंश दीपक में कवि ने इस अलंकार का प्रयोग इस प्रकार किया है -

मुजग भोग सम्भव मणिचारू ।गहि न गुण सुनि करहु विचारू।।२

भरत के सौजन्य पर अयोध्या के निवासियों द्वारा प्रकट किया गया आत्म - विश्वास उपर्युक्त अर्द्धाली में वर्णित किया गया है। इसी प्रकार श्रीराम के द्वारा भरत के संबंध में प्रकट किये गये उद्‌गार भी इसी अलंकार के माध्यम से इस प्रकार व्यक्त हुये हैं-

परम पुनीत भरत करतूती। करै प्रमोद न राज विभूती।।३

५- रूपकातिशयोक्ति

जहां कवि प्रस्तुत को इस सीमा तक बढ़ा चढ़ाकर प्रदर्शित करने की चेष्टा करता है कि उपमेय का अस्तित्व ही लोप हो जाता है केवल उपमान द्वारा ही उसका बोध हो पाता है वहीं रूपकातिशयोक्ति की प्रतिष्ठा होती है। ४ रघुवंश दीपक में इस अलंकार की योजना हमें सीता हरण पर किये गये राम के विलाप के प्रसंग में मिलती है। कवि ने राम को महा विरही के रूप में नर लीला करते हुये वन के विभिन्न पशुओं, पक्षियों, नदी, वृक्षादि से सीता का पता पूछते हुये इसप्रकार दिखाया है कि यह सम्पूर्ण अप्रस्तुत उपमान वियोगोद्दीपन में सहायक होते हैं। ५

१- भिखारीदास - काव्य निर्णय सम्वत् १९५३ सस्करण दोहा -७३

लखि विम्ब प्रतिविम्ब गति, उपमेयोपमान ।
लुप्त शब्द वाचक किये , है दृष्टान्त सुजान।।

२- रघुवंश दीपक अयोध्याकाण्ड- दोहा १९०।७

३- वही- अयोध्याकाण्ड दोहा २४६।१

४- डा०राजकुमार पाण्डेय-रामचरितमानस का काव्य शास्त्रीय अध्ययन प्रथम सस्करण पृष्ठ ३८९ ।

५- रघुवंश दीपक - अरण्यकाण्ड - दोहा ९६ से दोहा १०० तक का वर्णन ।

६- अतिशयोक्ति

भावोत्कर्ष के लिये सहजराम जी ने इस अलंकार का प्रयोग विशेष कर सौन्दर्य वर्णन तथा युद्ध वर्णन के अवसर पर किया है। यहां एक उदाहरण पर्याप्त होगा। सीता के सौन्दर्य का अंकन करने के लिये कवि ने महाकाव्य के नायक के मुख से इस प्रकार कहलवाया है -

सिय मुख समता शशि यह लीन्हा। शंकर जटा विपिन तप कीन्हा।।
करि अभिषेक देव धुनि आया। मैन पंच पंचागिनी काया ।।
यहि प्रकार तप करि तन तावा। सिय मुख समता तवहुं न पावा।।
पाप कलाप ताप भय करई। जन मन गगन प्रकाशित करई ।।
सिय मुख चंद अमंद अदूषा। श्रवत सुधा सम वचन पियूषा।।
पवन संग महि धूरि उड़ानी। भयो धूसरित शशि लपटानी।।१

अतिशयोक्ति का इस प्रकार प्रयोग सौन्दर्य वर्णन को अधिक प्रभावशाली बना देता है। इस सबंध में यह उल्लेखनीय है कि सहजराम ने विहारी की भांति अतिशयोक्तियों को ऐसी ऊहा त्मकता तक नहीं पहुंचने दिया है कि जिस से हम चमत्कृत तो होते हैं किन्तु उनकी वास्तविकता हमें अप्रीतिकर लगती है।

७- उल्लेख

उल्लेख का अर्थ है लिखना, वर्णन करना अथवा चित्रण करना । ज्ञातृ भेद से अथवा विषय भेद से जहां एक वस्तु का अनेक रूपों में वर्णन किया जाये, वहां उल्लेख अलंकार होता है। २ ` रघुवंश दीपक ` में इस अलंकार का प्रयोग कवि ने राम को अनेक रूपों में प्रकट करते समय किया है। निम्नांकित उदाहरण में इसकी सार्थकता लक्ष्य की जा सकती है -

देखे भूप सुवन सुख दायक। कटि तूणीर पाणि धनुशायक ।।
सेवक शिव विरंचित गण नायक ,वेद पुराण विशद यश गायक।।

१- रघुवंश दीपक- [redacted] बालकाण्ड - दोहा २४५।३ से ८ चौपाई तक

२- देखिये सय्यक कृत अलंकार सर्वस्वम् -

` यत्रैकं वस्तु अनेक धागृह ते स [redacted] रूप वाहुल्योल्लेखनादुल्लेख ।

सबल सदा समरथ सब लायक। यम कुत बाल भानु शशि पावक।।
अशरण शरण सुरेश सहायक। सेवत सुलभ वचन मन कायक ।।
करन धार भवसागर नावक। सजल जलद दुख दारिद दावक।।१

एक ही राम विभिन्न रूपों में किस प्रकार व्याप्त हैं तथा उनकी सत्ता किस प्रकार विभिन्न रूपों में कार्य करती है इसका वर्णन कवि ने उल्लेख अलंकार के माध्यम से किया है।

अलंकार प्रयोगों के उपरि निर्दिष्ट रूपों के अतिरिक्त 'रघुवंश दीपक' के विशाल कलेवर में अपह्नुति, निदर्शना, सन्देह, भ्रान्तिमान, वीप्सा आदि अन्य अलंकारों का सन्निवेश किया गया है जिनसे काव्य में भावोत्कर्ष, सौन्दर्य वृद्धि तथा रमणीयता की सृष्टि हुई है। इन अलंकारों के समुचित यथावसर प्रयोग के कारण यह नहीं प्रतीत होता कि वे मात्र चमत्कार प्रदर्शन के लिये प्रयोग किये गये हैं। अत: इसमें सन्देह नहीं कि सहजराम द्वारा अलंकार प्रयोग भावोत्कर्ष के सशक्त साधन के रूप में ही हुये हैं, अन्य रीति कालीन कवियों की भांति कवि ने उन्हें कभी भी कवि- कर्म का साध्य नहीं बनने दिया जो युग गत भूमिका को देखते हुये उसकी उल्लेखनीय ' उपलब्धि कही जायेगी ।

रघुवंश दीपक में छन्द विधान

' रघुवंश दीपक ' के छन्द विधान पर विचार करने से पूर्व यदि हम उसके स्वरूप उसकी उपयोगिता एवम् अनिवार्यता पर दृष्टि क्षेप करें तो आलोच्य ग्रन्थ में उसके प्रयोग तथा उसकी सफलता, असफलता को सरलता से लक्ष्य किया जा सकता है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने छन्द पर अपने विचार प्रकट करते हुये कहा है कि छन्द वास्तव में बंधी हुई लय के भिन्न भिन्न ढांचों का योग है जो निर्दिष्ट लम्बाई का होता है। लय, स्वर के चढ़ाव उतार स्वर के छोटे छोटे

१- रघुवंश दीपक - बालकाण्ड दोहा २८८।४-८

ढांचे ही हैं जो किसी छन्द के चरण के भीतर व्यस्त रहते हैं । १ इस प्रकार लय, निर्दिष्ट लम्बाई तथा भिन्न भिन्न ढांचों का योग छन्द में अनिवार्य माने गये हैं । आचार्य जगन्नाथ प्रसाद 'भानु' ने छन्द को परिभाषित करते हुये कहा है -

' मत्त वरण गति यति नियम, अंत हिसमता वंद ।
जा पद रचना में मिलै, भानु भनत स्वइ छन्द।।२

' मात्राओं व वर्णों की रचना, गति तथा यति का नियम और चरणान्त में समता जिस कविता में पाई जावे उसे छन्द कहते हैं । प्रकारान्तर में उपर्युक्त दोनो बातें प्राय: एक सी प्रतीत होती हैं । हम यह कह सकते हैं कि लय सहित, निर्दिष्ट लम्बाई (मात्राओं औरवर्णों की रचना) में आवश्यक विराम के साथ की गई पद रचना छन्द है। छन्द की उपयोगिता वस्तुत: उसकी प्रेषणीय में है । काव्यानुभूति की अभिव्यक्ति के लिये भाषा एक साधन है यदि वही लय और स्वर के साथ भावों को वहन करती है तो उसमें प्रेषणीयता का गुण अधिक बढ़ जाता है। अत: कवियों द्वारा भाषा की इसी सम्प्रेषण शक्ति की वृद्धि के लिये छन्दों का प्रयोग किया जाता है जिसमें लय और स्वर के कारण भावों को दूसरों तक प्रेषित करने का कार्य सहल हो जाता है।

भारतीय साहित्य में दो प्रकार के छन्दों का प्रयोग हुआ है। (१) वार्णिक (२) मात्रिक । वार्णिक छन्दों का प्रयोग हिन्दी में कम हुआ है किन्तु मात्रिक छन्द हिन्दी की प्रकृति के अनुरूप है ।

रघुवंश दीपक में प्रयुक्त प्रमुख छन्द

रघुवंश दीपक में मुख्य रूप से चौपाई दोहा, सोरठा, छन्द, ग्रन्थ के प्रारम्भ से लेकर अन्त तक मिलते हैं किन्तु कतिपय छन्दो को कवि ने अपने प्रेरक महाकवि गोस्वामी तुलसीदास जी की रचनाओं से ग्रहण किया है। महाकाव्य

१- आचार्य रामचन्द्र शुक्ल - काव्य में रहस्य वाद - पृष्ठ १३५ प्रथम संस्करण
२- आचार्य जगन्नाथ प्रसाद भानु, छन्द प्रभाकर - दशम संस्करण पृष्ठ १ शीर्षक - छन्द लक्षण ।

में छन्द परिवर्तन का जो विधान किया गया है कवि ने उसका पालन इस उद्देश्य से किया है जिससे भावोत्कर्ष में सहायता मिले तथा कथा में गतिमयता आ सके। अर्थानुरूप यथावसर कवि ने ग्रन्थ के प्रत्येक काण्ड में छन्द परिवर्तित किये हैं जिनमें मुख्य छन्दों का परिचय यहाँ प्रस्तुत करना समीचीन होगा ।

१- चौपाई - 'रघुवंश दीपक' महाकाव्य का यह प्रमुख छन्द है। इस छन्द के प्रत्येक चरण में १६ मात्रायें होती हैं। अन्त में गुरु, लघु न हो तथा जगण व तगण न पड़े । १ यहाँ उल्लेखनीय है कि कवि ने इस बात की ओर ध्यान नहीं दिया कि कितनी अर्द्धालियाँ अथवा चौपाइयों के बाद दोहा या सोरठा आना चाहिये जिस पर हम शैली से सबंधित विवेचन के अन्तर्गत विचार करेंगे । सम्पूर्ण ग्रन्थ में चौपाई छन्द की प्रधानता होते हुये भी उसके प्रयोग में किसी प्रकार का क्रम नहीं रखा गया ।

२- दोहा - चौपाई के बाद 'रघुवंश दीपक' में दोहों का प्रयोग अधिक मात्रा में मिलता है। इसमें कुल ४८ मात्रायें होती हैं। प्रथम और तृतीय चरण में १३ तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण में ११ मात्रायें होती हैं। दूसरी और चौथी पंक्ति में अन्त्यानुप्रास भी पाया जाता है। 'रघुवंश दीपक' प्रत्येक काण्ड का प्रारम्भ और अन्त दोहा छन्द से हुआ है किन्तु बालकाण्ड का प्रारम्भ इसका अपवाद है। दोहों के प्रयोग की उल्लेखनीय विशेषता यह है कि उससे पूर्व की अर्द्धालियों में कहे गये इतिवृत्त अथवा अन्य वर्णन को निष्कर्ष रूप में दोहे के अन्तर्गत कह दिया गया है। दूसरा उल्लेखनीय तथ्य यह है कि दोहे के प्रयोग में सर्वत्र एक क्रम नहीं रखा गया ।

३- सोरठा - सोरठा का आकार प्रकार एवं कार्य व्यापार प्राय: दोहे के समान ही है। इसमें भी ४८ मात्रायें होती हैं किन्तु इसकी रचना दोहे से विपरीत दिशा में होती है। सोरठे के प्रथम व तृतीय चरण में ११ तथा द्वितीय और चतुर्थ चरण में १३ मात्रायें होती हैं । 'रघुवंश दीपक' में सोरठा के इसी रूप का प्रयोग मिलता है तथा दोहे की भाँति ही इस छन्द का प्रयोग भी

१- आचार्य जगन्नाथ प्रसाद 'भानु' - छन्द प्रभाकर - दशम संस्करण पृष्ठ-४६

अर्द्धालियों में कही गई बात को निष्कर्ष के रूप में प्रस्तुत करने के लिये किया गया है। और इसके प्रयोग में कवि ने किसी क्रम का निर्वाह नहीं किया।

४- हरिगीतिका- 'रघुवंश दीपक' में चौपाई, दोहा, सोरठा के पश्चात् हरिगीतिका छन्द का ही अधिक प्रयोग मिलता है। सरसता तथा प्रसाद गुण की दृष्टि से चौपाई को छोड़कर इसी छन्द ने अपनी व्यापकता का परिचय दिया है। हरिगीतिका में संगीतात्मकता लय तथा स्फूर्ति की विशेषता को 'रघुवंश दीपक' में देखा जा सकता है। २८ मात्राओं के इस छन्द में १६,१२ पर यति होती है। अन्त में लघु एवं गुरु की नियोजना की जाती है। 'रघुवंश दीपक' में हरिगीतिका का यही रूप मिलता है। इस योजना के परीक्षण से ज्ञात होता है कि हरि गीतिका के पश्चात् आने वाले दोहे से कवि कथा की गति को आगे बढ़ाता या नये प्रसंग से सम्बद्ध करता है। अत: हरि गीतिका का प्रयोग प्रकारान्तर से काव्य शैली का एक महत्वपूर्ण अंग बन जाता है। इस प्रयोग की दूसरी विशेषता यह है कि पूर्व वर्णित भाव में कवि हरिगीतिका द्वारा पाठक के मन को और अधिक समय तक रमाने में यत्नशील जान पड़ता है। निम्नांकित उदाहरण में इस तथ्य को लक्ष्य किया जा सकता है -

चौपाई - पंवरि दुआरि अवधि पति आये। करत कुलाहल जाचक धाये ।।

इस चौपाई के भाव को ही निम्नांकित हरिगीतिका छन्द में दुहराया गया है -

हरिगीतिका छन्द- धाये कुलाहल करत यांचक देवता द्विजत न धरे ।
लागे लुटावन कनक मणि महिपाल मणि देखत खरे।।
कोउ हमे माल विशाल भूषित वाजि गजरथ छोरहीं ।
कोउ कनक कंकण खींचति मणि मुक्तावली लरि तोरहीं।।

दोहा- दुरे दूरि दारिद दुरित , भरे भवन सुख भूरि ।
अति खल जे हरि पद विमुख,तिन कहं यह सुख दूरि।।

इसी प्रकार अन्य प्रसंगों में भी इस छन्द का प्रयोग इसी रूप में मिलता है ।

५- त्रिभंगी छन्द- इस छन्द में प्रत्येक चरण में १०,८,८,६ के विश्राम से ३२ मात्रायें होती हैं। आदि में जगण-के-विश्राम-से-३२-मात्र का निषेध और अन्त में गुरु होता है। 'रघुवंश दीपक' में इस छन्द की रचना विशेषकर स्तुति के वातावरण में की गई है। यह छन्द इतिवृत्तात्मक न होकर कवि की आध्यात्मिक मन-स्थिति का परिचय देने मे सफल हुआ है। कौशल्या द्वारा राम जन्म के समय राम की ईश्वर रूप में स्तुति इसी छन्द में की गई है। यथा-

बोली मृदुबानी, अति रस सानी, कौशल्या कर जोरि दोउ।
जे जगत अपारा रूप तुम्हारा, अकथ अनादि न जान कोउ।।
शंकर शनकादी सुर ब्रह्मादी आतम वादी वेदक ईं।
करि यतन अशेषा रूपविशेषा नैन न देखा थिर न रहैं।।

- - - - - - -

रघुवंश दीपक में इस छन्द को १६ चरणों से लेकर २० चरणों तक समाप्त किया गया है और अन्त में एक दोहा का अनिवार्यत: प्रयोग हुआ है। उदाहरणार्थ अहिल्या द्वारा श्रीराम की गई स्तुति में २० चरणों का प्रयोग हुआ है तथा अन्त में दोहा है। १

६- तोमर छन्द - इस छन्द के प्रत्येक चरण में बारह (१२) मात्रायें होती हैं अन्त में गुरु लघु होता है। सहजराम जी ने इस छन्द का प्रयोग प्राय: युद्ध वर्णन में किया है। यहाँ इसका एक ही उदाहरण पर्याप्त होगा -

मन्दोदरी दुर्वाद। कह जागु रे घन नाद।
अति काम सोवत काह। पुर कपिन दीन्हो दाह।।
उठु रे अकम्पन वीर। कटि बांधु पट तूणीर।।
गढ़ लंक घेरेउ राम। करु निकसि के संग्राम।
सुनि घोर शोर पुकार। बांधेउ असुर हथियार।।
कपि करत केहरि नाद। जागे सकल मनु जाद।।२

१- रघुवंश दीपक - बालकाण्ड दोहा २२१ तथा २२२ के बीच का छंद त्रिभंगी है-
'गौतम प्रियबानी निज उर आनीप्रभु पहिचान पाईं परी।

२- रघुवंश दीपक - लंका काण्ड दोहा ३६ से पूर्व का छन्द।

युद्ध वर्णन में प्राय: क्षिप्र गति के छन्द अधिक अनुरूप होते हैं और समर्थ कवि छन्दों की इस शक्ति को लक्ष्य करके इस ओर विशेष ध्यान रखता है। तोमर छन्द इसी प्रकार का है। चन्दवरदायी तथा गोस्वामी तुलसीदास जैसे महाकवियों ने युद्ध वर्णनों में इसके सफल प्रयोग किये हैं। सहजराम जी के एतद्विषयक प्रयोग उनकी सामर्थ्य, अधिकार तथा भावानुरूप छन्द प्रयोग का साक्ष्य उपस्थित करते हैं।

७- चौपैया - इस छन्द के प्रत्येक चरण में १०, ८, १२ की यति से ३० मात्रायें होती हैं। अन्त में एक सगण और एक गुरु का प्रयोग होता है। 'रघुवंश दीपक' में इस छन्द का प्रयोग भी स्तुति के वातावरण के विशेष रूप से पुष्ट करता है, प्रभावशाली बनाता है। प्रस्तुत उदाहरण में परशुराम द्वारा श्रीराम की स्तुति की गई है जिसमें चौपैया छन्द का प्रयोग हुआ है -

छन्द - 'रघुपति शर फेंकी मुनि गति छेकी, त्रिभुवन पति पहिचाना।
कहि गद् गद् बानी स्तुति ठानी, जय जय कृपा निधाना।।
जय जय जगदादी पुरुष अनादी, ब्रह्मादिक सुर ध्यावै।
जय जय जग योगनी पुरुष अयोनी, वेद विशद यश गावै।।
तुम ही हरि एका जन्म अनेका, माया गुण अनुसारी।
जिमि जल प्रतिबिम्बा तरणि कदम्बा, मूरति एक निहारी।।
जय अधम उधारन मुनि तिय तारन, जग कारण जगदीशा।।
प्रणतारन भंजन जन मन रंजन, प्रकृति पार परमीशा।।[१]

चौपैया छन्दो के प्रयोग में विशेष उल्लेखनीय तथ्य यह है कि इस छन्द में भी प्राय: इससे पूर्व की अर्द्धालियों में कही गई बात को छन्द के प्रथम एक या दो चरणों में अवश्य दुहराई गई है। उपर्युक्त छन्द से पूर्व की अर्द्धाली में इस तथ्य को लक्ष्य किया जा सकता है जो इस प्रकार है -

सुनि रघुनाथ शिली मुख फेंकी। भृगुपति केरि स्वर्ग गति छेकी।।[२]

१- रघुवंश दीपक - बालकाण्ड - दोहा ६४ के पूर्व का छन्द।
२- वही - छन्द से पहले की अर्द्धाली।

अत: इसके प्रयोग की विशेषता भी पूर्व निर्दिष्ट हरि गीतिका के प्रयोग की भांति ही है।

वर्णिक छन्द

उपर्युक्त मात्रिक छन्दों के अतिरिक्त 'रघुवंश दीपक' के कवि ने कतिपय वार्णिक छन्दों का भी प्रयोग किया है। इनमें से त्रोटक, भुजंग ,प्रयात तथा नाराच छन्द विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

८- त्रोटक छन्द - यह बारह अक्षरों का वार्णिक वृत है। तीसरा छठा, नवां एवं बारहवां अक्षर गुरु होता है।

जय राजिव लोचन राम हरे। मत्स्यादि रमापति रूप धरे ।।
शत कोटि मनो भव छोरि छवी। तम तोम निशाचर तेज रवी ।।

६- भुजंग प्रयात छन्द- इसके चारों चरण में बारह बारह अक्षर होते हैं। प्रत्येक चरण में चार यगण होते हैं और प्रथम, सप्तम एवंदशम अक्षर लघु होता है। रघुवंश दीपक में यह छन्द इसी प्रकार प्रयुक्त हुआ है।

नमामिं दिरानाथ पाथोज नामं। क्षितीशं क्षमाशील नीलाम्बु दामं ।।
दश ग्रीव वशांटवी धूम केतुं। महा घोर संसार पाथोधि सेतुं ।।

त्रोटक तथा भुंजग प्रयात छन्दों को स्तुतियों के प्रसंगों में प्रयोग किया गया है जो प्राय: रामचरितमानस के प्रयोग केअनुसार ही प्रतीत होते हैं।

१०- नाराच छन्द - प्रत्येक चरण में १६ अक्षर होते हैं तथा अन्त में रगण होता है। रघुवंश दीपक में इस छन्द का प्रयोग युद्ध वर्णन में किया गया है जो इसकी प्रकृति के अनुकूल ही है। शब्दावली इसप्रकार है -

प्रयाग की नदी मनो मिलाप कीन्ह छाइके ।
लरै सरोष सूरमा उरै न घोर घाय कै ।।
टरै न पांव खेत सो सरोष शूर गर्जहीं ।
बिलोकि कै विशाल युद्ध लोक पाल लर्जहीं ।।

११- मुक्तक दण्डक - इन वर्ण वृतों को अतिरिक्त मुक्तक दण्डक १ छन्दों का

१- दण्डक छब्बिस से अधिक, साधारण गण संग ।
मुक्तक गिनती वरण की, कहु लघु गुरु प्रसंग ।।

दृष्टव्य -छन्द प्रभाकर- जगन्नाथ प्रसाद 'भानु' कृत ,दशम संस्करण पृष्ठ २०७

प्रयोग भी रघुवंश दीपक के अन्तर्गत मिलता है जो प्राय: श्रीराम की स्तुति करने के प्रसंग में ही प्रयुक्त हुआ है। १

छन्द विधान सम्बन्धी उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि 'रघुवंश दीपक' के कवि का छन्द-रचना-विधान पर पूर्ण अधिकार था औरउसमे छन्द रचना के शास्त्रीय नियमों का पालन किया है। यह बात और है कि वह इसमें भी गोस्वामी तुलसीदास जी से ही पूर्णत: प्रभावित था। हमारे इसकथन का आधार यह है कि 'रघुवंश दीपक' में सहजराम जी ने विभिन्न प्रसंगों तथा अवसरों पर जि छन्दो का प्रयोग किया है प्राय: वही छन्द उन्हीं प्रसंगों तथा अवसरों पर गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा भी रामचरित मानस में प्रयुक्त हुये हैं। उदाहरण के लिये राम जन्म के समय कौशल्या द्वारा ब्रह्म के रूप में राम की स्तुति के लिये जिस प्रकार रामचरित मानस में त्रिभंगी छन्द का प्रयोग हुआ है, उसी प्रकार 'रघुवंश दीपक में भी इस अवसर पर यही त्रिभंगी छन्द प्रयोग किया गया है। इसी प्रकार इसी छन्द का प्रयोग अहिल्या प्रसंग में दोनो हि महाकाव्यों में एक सा मिलता है। सम्पूर्ण ग्रन्थ में ऐसे ही अन्य छन्दो के प्रयोग के उदाहरण भी उपलब्ध होते हैं।

छन्दो के प्रयोग में एक अन्य विशेष तथ्य जो 'रघुवंश दीपक' में दिखाई देती है वह यह है कि कवि ने इनके प्रयोग में भावानुरूपता का सदैव ध्यान रखा है जो उसके छन्द प्रयोग के समुचित विवेक को सूचित करता है। चौपाई, दोहा, सोरठादि में इतिवृत्तात्मकता के निर्वाह की शक्ति अधिक होती है और उसकीसरलता तथा प्रवाहमयता में आख्यानक काव्यों का सौन्दर्य भी अधिक प्रस्फुटित होता है। किन्तुवे कभी कभी नीरस भी लगने लगते हैं यदि लम्बे प्रसंगों में कवि ने विभिन्न छन्दो के प्रयोग से उसमें विविधता न उत्पन्न कर दिया। हमारे आलोच्य कवि ने इसी उद्देश्य सेलम्बे लम्बे प्रसंगों में छन्द परिवर्तन में विशेष रुचि दिखाई है जिससे या तो भाव विशेष का समुचित उत्कर्ष हुआ है या फिर कथा के प्रवाह में गतिमयता आई है। इसकी एक अन्य विशेषता यह है कि इसके कारण उपरि निर्दिष्ट नीरसता से कवि अनेक प्रसंगों

१- रघुवंश दीपक - उत्तर काण्ड - दोहा २६ तथा ३० के मध्य का छन्द

में अपने महाकाव्य को बचा ले गया है और कभी कभी तो इससे कथा रस में अभिवृद्धि भी हुई है। अस्तु इस दृष्टि से कवि का छन्द विधान महा काव्योचित ही कहा जायेगा ।

'रघुवंश दीपक' के छन्दों में परिवर्तन की एक विशेषता यह भी है कि कवि ने जब किसी महत्वपूर्ण चरित्र की महत्ता को सामान्य जनों के लिये ग्राह्य बनाने का प्रयास किया है अथवा अपने परमाराध्य श्रीराम की स्तुति करते हुये उनका गुणगान करना चाहा है, तो नये छन्दों का प्रयोग कर उसमें नवीनता का समावेश कर दिया है। वस्तुत: ऐसे प्रसंगो में कवि आध्यात्मिक दार्शनिक तथा भक्ति विषयक विभिन्न विचार बड़े आकर्षक और सरल पद्धति से प्रस्तुत करने में सफल हो सका है। इस प्रकार कवि अपने उद्देश्य में भी सफलता प्राप्त कर कवि कर्म को सार्थक बना सका है ।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि 'रघुवंश दीपक' में कवि का छन्द विधान काव्य की उस अनिवार्य आवश्यकता की पूर्ति करता है जिसे हम प्रेषणीयता कहते हैं । कवि ने छन्दों के माध्यम से अपनी आत्माभिव्यक्ति कर उसे पाठकों की सरस आस्वाद्य योग्य वस्तु बनाने में पूर्ण सफलता प्राप्त की है। छन्द विधान की दृष्टि से वह गोस्वामी तुलसीदास जी की भांति ही अवधी को एक सम्पन्न तथा अति समर्थ काव्य भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने में भी पूर्णत: सफल हो सका है ।

शैली

पूर्ववर्ती पृष्ठों के विवेचन पर जब हम एक विहंगम दृष्टि डालते हैं तो यह बात स्पष्ट रूप से दिखाई देती है कि कवि सहजराम जी ने 'रघुवंश दीपक' की रचना में महाकाव्योचित शैली का अनुसरण किया है। हम शैली के इस वैशिष्ट्य को प्रस्तुत प्रबन्ध के पंचम अध्याय में यथा स्थान लक्ष्य कर चुके हैं अत: एतद् सम्बन्धी विस्तृत विवेचन की आवश्यकता यहां नहीं प्रतीत होती । केवल कवि द्वारा अपनाई गई शैली के कतिपय रूपों की ओर संकेत करना पर्याप्त होगा ।

चौपाई-दोहा-शैली - भाषा तथा छन्द प्रयोग की दृष्टि से कवि ने 'रघुवंश

दीपक में चौपाई, दोहा, सोरठा शैली को ग्रहण किया था। आख्यानक काव्यो में अवधी के माध्यम से चौपाई दोहा शैली की सफलता जायसी तथा गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा प्रतिष्ठित हो चुकी थी। अत: कवि ने अपने काव्य में इसी शैली को स्वीकार किया था। फिर भी उसने अपनी काव्य चेतना को पूर्णत: सजग रखकर अपनी प्रतिभा के आधार पर परम्परा से प्राप्त इस शैली में आवश्यक परिवर्तन किये हैं। जायसी ने पद्मावत में सात सात अर्द्धालियों के पश्चात् एक दोहे की व्यवस्था की थी किन्तु तुलसीदास जी ने रामचरित मानस में आठ आठ चौपाइयों के बाद एक या दो दोहो की रचना की। किन्हीं किन्हीं प्रसंगो में इस क्रम में चौपाइयों की संख्या आठ से बढ़कर ६,१०,१३,१४ तक हो गई है किन्तु सामान्यत: क्रम आठ चौपाइयों के बाद एक दोहे का ही मिलता है। सहजराम जी ने ग्रन्थ के प्रारम्भ में तो आठ चौपाइयों के बाद एक दोहे का क्रम अवश्य रखा है किन्तु इस क्रम का सर्वत्र निर्वाह नहीं किया और चौपाइयों की संख्या ८ से बढ़कर प्रसंगानुसार ६, १०, १३, १४, १५ तक हो गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि कवि ने जान बूझ कर क्रम निर्वाह में तत्परता इसलिये नहीं दिखाई कि वह परम्परा निर्वाह की अपेक्षा भावाभिव्यक्ति को अधिक महत्व देना चाहता था। कवि का यह प्रयास सर्वथा सराहनीय कहा जायेगा क्योंकि भावाभिव्यक्ति तथा प्रेषणीयता ही काव्य के मुख्य तत्व होते हैं।

जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं कि कवि सहजराम जी ने परम्परा निर्वाह की अपेक्षा भावाभिव्यक्ति को विशेष महत्व दिया है ; हम उसी सन्दर्भ में यह कहना चाहेंगे कि कवि ने 'रघुवंश दीपक' में सूक्ष्म से सूक्ष्म मानवीय भावों तथा सम्वेदनाओं को अभिव्यक्त करने के लिये भावानुरूप शैली को विशेष महत्व दिया है। इस के अन्तर्गत उन्होंने रसानुरूप, स्थिति तथा अवसरानुरूप विविध शैलियों को अपनाया है। सुख- दुखात्मक प्रत्येक प्रकार की स्थितियों में मानव हृदय को पूर्णत: व्यक्त करके ही रसात्मक अनुभूति करायी जा सकती है, कवि इस रहस्य से पूर्णत: विज्ञ था। इसीलिये एक लम्बे अवकाश तक पाठक को किसी विशेष भाव दशा में निमग्न रखने के उद्देश्य से अपने विभिन्न छन्दों की रचना करके लम्बे लम्बे प्रसंगो की सृष्टि की है। इसमें उसकी कवित्व शक्ति

एवम् मौलिक उद्भावनाओं का विशिष्ट हाथ दिखाई देता है।

पात्रानुरूपता इनकी शैली की एक अन्य विशेषता है जिसकी ओर उन्होंने विशेष ध्यान दिया है। किसी पात्र का अन्तर्जगत प्रत्यक्ष करते हुये स्वाभाविकता को दृष्टि में रखकर उसकी सूक्ष्म से सूक्ष्म भावना की अभिव्यक्ति के साथ साथ उसके व्यक्तित्व को मूर्त कर देने वाली शैली पात्रानुरूप शैली कहलाने की अधिकारिणी है। 'रघुवंश दीपक' के कवि ने इस कला में पूर्ण सफलता प्राप्त की है। इस दृष्टि से ग्रन्थ के अन्तर्गत विभिन्न कथोपकथन तथा पात्रों के मध्य होने वाले सम्वादों को देखा जा सकता है साथ ही उनके द्वारा सम्पन्न कार्यों में अभिव्यक्त होने वाले चरित्र विशेष को भी इस दृष्टि से परखा जा सकता है। लक्ष्मण, परशुराम सम्वाद, लक्ष्मण राम सम्वाद, राम-कौशल्या सम्वाद, राम सीता सम्वाद, राम केवट सम्वाद, भरत-कैकेयी सम्वाद, भरत-राम सम्वाद, राम -हनुमान सम्वाद, राम -सुग्रीव सम्वाद, इस दृष्टि से उल्लेखनीय हैं। इन प्रसंगों में पात्रों के व्यक्तित्व तथा उनके अन्तर्जगत को उद्घाटित करने के लिये प्रसंगानुसार, अन्तर्द्वन्द्व, उत्तेजना, अमर्ष, उत्साहादि भावों को पात्रों के माध्यम से व्यक्त किया गया है।

'रघुवंश दीपक' की शैली की उल्लेखनीय विशेषता यह है कि उसमें शब्द शक्तियों का पूर्ण समाहार मिलता है साथ ही काव्यगत माधुर्य, ओज एवं प्रसाद गुणों की सन्निविष्टि से सम्पूर्ण काव्य प्रदीप्त हो उठा है। 'साहित्य के अन्तर्गत जिस शक्ति किंवा कौशल के द्वारा शब्दार्थ का बोध होता है उसी को शक्ति कह कर पुकारा गया है। शब्द शक्ति की विवेचना वस्तुतः सार्थक शब्दों की ही विवेचना होती है क्योंकि साहित्य के अन्तर्गत अर्थवान शब्द को ही शब्द कहा गया है। १ भारतीय काव्य के आचार्यों ने इस दृष्टि से शब्द की तीन शक्तियों का उल्लेख किया है (१) अभिधा (२) लक्षणा (३)व्यंजना। 'रघुवंश दीपक' में इन तीनों ही शब्द शक्तियों का चमत्कारिक स्वरूप देखा जा

१- डा० राजकुमार पाण्डेय - रामचरित मानस का काव्य शास्त्रीय अध्ययन प्रथम संस्करण पृष्ठ ३५५।

सकता है किन्तु कवि ने इनके प्रयोग में भी स्वाभाविकता का विशेष ध्यान रखा है कहीं भी उसने उनके बलात् नियोजन की आतुरता नहीं दिखाई ।यही कारण है कि ये शब्द शक्तियां कवि की समूची काव्य धारा में घुलमिल कर एक रस हो गई हैं कहीं पर भी वे ऊपर से थोपी हुई नहीं लगती । सभा-सम्वादों तथा स्फुट प्रसंगों के अन्तर्गत यद्यपि हमें अभिधा की ही व्यापकता दिखाई देती है किन्तु ऐसे अवसरों पर लाक्षणिकता तथा व्यंग्यात्मकता समन्वित रूप सम्पूर्ण काव्य को रमणीय तथा स्वाभाविक बना सकने में वह पूर्ण सफल रहा है। उदाहरणार्थ लक्ष्मण ,परशुराम सम्वाद तथा हनुमान -रावण सम्वाद एवं अंगद -रावण सम्वाद में इन शब्द शक्तियों का समन्वित रूप देखा जा सकता है।

' रघुवंश दीपक ' में गुणों कीयोजना भी बड़ी ही स्वाभाविक प्रसंगानुकूल तथा भावानुरूप हुई है। सौन्दर्य वर्णन में तथा रति भाव की प्रतिष्ठा में माधुर्य गुण युक्त शैली का प्रयोग, तथा युद्धादि प्रसंगों में वीर, वीभत्स एवं रौद्र रसो में ओज गुण युक्त पदावली का प्रयोग कवि की काव्य प्रतिभा का समुचित परिचय प्रस्तुत करती है। सम्पूर्ण काव्य में प्रसाद गुण से युक्त वर्णन शैली के कारण अर्थ की स्पष्टता तथा सुबोधता का रूप स्पष्ट ही देखा जा सकता है। वस्तुत: प्रसाद गुण माधुर्य तथा ओज दोनो को समेट कर चलता है अत: उसकी व्यापकता असंदिग्ध ही है। यहां यदि हम 'रघुवंश दीपक ' की कतिपय पंक्तियां इनगुणों तथा शब्द शक्तियों के कुशल प्रयोग के अवलोकनार्थ प्रस्तुत करना चाहें तो वह अप्रासंगिक न होगा ।

मरकत कनक बरण वर वीरा। कटि तूणीर पाणि धनु तीरा।।
कल्प लता कर पल्लव दोऊ ।अभिमत दानि जानि सब कोऊ ।।
उर मणिमाल पदिक की शोभा। कहि सकै छवि अस कवि कोभा।।
कुण्डल मण्डित गण्ड रुचि, श्याम शिखण्डक- सोहइ ।
मृणाण सहित विशाल भुज, देखत मुनिमन मोहइ ।।
कम्बु कण्ठ चिबुक धर रुरे । सोहत मदन कला निधि पूरे ।।
सोहत अरुण श्याम दृग कोटे । बंधुक सुवन सेज अलिसोये ।।

तिलक ललाट पटल गोरोचन । सुखमा सदन मदन मद मोचन ।।
नख शिख अद्भुत रूप निहारी। भईं विदेह विदेह कुमारी ।।
इक टक वदन विलोकत ठाढ़ी । मनहुं विचित्र चित्र लिखि काढ़ी।।
देखि विदेह विदेह किशोरी। बोली एक सखी कर जोरी ।।
निर्गुण ब्रह्म ध्यान तजि देहू । सगुण बिलोकि नैन फल लेहू।। १

उपर्युक्त वर्णन के माधुर्य तथा प्रसाद गुण का समन्वित रूप कितना मनोहर एवं रमणीय बनकर प्रकट हुआ है। साथ ही अभिधा एवं व्यंजना शक्तियों का सन्निवेश भी दृष्टव्य है। इस प्रकार के अन्य अनेक उदाहरण रघुवंश दीपक में मिलते हैं । ओज गुण के लिये युद्ध वर्णन विशेष रूप से देखे जा सकते हैं।

' रघुवंश दीपक ' के महाकाव्यत्व पर विचार करते समय हम यह लक्ष्य कर चुके हैं कि कवि ने महाकाव्य के अनुरूप गम्भीर तथा उदात्त शैली को किस प्रकार अपनाया था। यहाँ केवल यह संकेत करना पर्याप्त होगा कि गम्भीर, दार्शनिक विवेचन, अथवा भक्ति की विशेष स्थितियोंका वर्णन करते समय या फिर आध्यात्मिकता का वातावरण प्रस्तुत करते समय कवि की शैली अधिक गम्भीर हो गई है। वैयक्तिक जीवन की सरलता, आडम्बर हीनता,सदाशयता एवं आचरण की पवित्रता को उन्होंने अपने काव्य के माध्यम से सामान्य जन तक पहुंचाने का जो प्रयास किया है वही उनकी आत्माभिव्यक्ति शैली के रूप में हमारे सम्मुख है जिसमें कवि की विराट चेतना को स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है ।

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम इसनिष्कर्ष पर सरलता से पहुंचते हैं कि रघुवंश दीपक का अभिव्यक्ति पक्ष अत्यन्त सबल, व्यापक तथा काव्य प्रतिभा से युक्त मौलिकता लिये हुये है। गोस्वामी तुलसीदास जी से प्रभावित तथा प्रेरित होकर भी कवि ने अपनी मौलिक काव्य चेतना का परिचय दिया है । वह सच्चे अर्थों में कवि था। भाषा, अलंकार,छन्द सभी दृष्टियों से उसका अभिव्यक्ति पक्ष एक महाकवि के अनुरूप ही है तथा हिन्दी राम काव्य धारा में वह गोस्वामी तुलसीदास जी के पश्चात् निश्चित रूप से सर्वश्रेष्ठ महाकवि के रूप में हमारे सम्मुख आता है।

१- रघुवंश दीपक - बालकाण्ड - दोहा २४० से २४२ के मध्य का प्रसंग ।